धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम् ॥३८॥

धूमेन - धुएँ से; आव्रियते - ढक

जाती है; वह्निः - अग्नि; आदर्शः - शीशा, दर्पण; मलेन - धूल से; च - भी; यथा - जिस प्रकार; उल्बेन - गर्भाशय द्वारा; आवृतः - ढका

रहता है; गर्भः - भ्रूण, गर्भ; तथा - उसी प्रकार; तेन - काम से; इदम् - यह; आवृतम् - ढका है ।

Text

जिस प्रकार अग्नि धुएँ से, दर्पण धूल से अथवा भ्रूण गर्भाशय से आवृत रहता है, उसी प्रकार जीवात्मा इस काम की

विभिन्न मात्राओं से आवृत रहता है।

गीता भूषण टीका

काम के प्रभाव के तीन सोपानों को स्पष्ट करने के लिए धूम्र, धूल और गर्भ के उदाहरण दिए गए हैं जिससे काम के

सामान्य , मध्यम और तीव्र प्रभाव समझे जाएँ |

धुएं से ढकी हुई आग प्रकाशमान नहीं होती है, लेकिन कुछ हद तक

ताप के अपने कार्य को करने में सक्षम होती है। धूल से ढका हुआ दर्पण अपनी साफ सतह के अभाव होने के कारण प्रतिबिंब को प्राप्त नहीं कर सकता है।

गर्भ द्वारा आवृत किया गया भ्रूण अपने पैरों को फैला नहीं सकता है, न ही इसे देखा जा सकता है।

उसी तरह, काम से थोड़ा-सा आवृत हुआ ज्ञान कुछ मात्र में सत्य

को पकड़ सकता है।(अग्नि)

जो ज्ञान मध्यम रूप से आवृत है वह ज्ञान को ग्रहण नहीं कर सकता है | (शीशा)

जो ज्ञान प्रचुर मात्रा में आवृत है वह क्रियाशील भी नहीं होता है और

वह ज्ञान के रूप में अनुभूत भी नहीं होता है |(गर्भ)

Purport

जीवात्मा के आवरण की तीन कोटियाँ हैं जिनसे उसकी शुद्ध चेतना धूमिल होती है । यह

आवरण काम ही है जो विभिन्न स्वरूपों में होता है यथा अग्नि में धुँआ, दर्पण पर धूल तथा भ्रूण पर गर्भाशय। जब काम की उपमा धूम्र से दी जाती है तो यह समझना चाहिए कि जीवित स्फुलिंग की अग्नि कुछ -

कुछ अनुभवगम्य है। दूसरे शब्दों में, जब जीवात्मा अपने कृष्णभावनामृत को कुछ-कुछ प्रकट करता है तो उसकी उपमा धुएँ से आवृत अग्नि से दी जाती है। यद्यपि जहाँ कहीं धुआँ होता है वहाँ अग्नि

का होना अनिवार्य है, किन्तु प्रारम्भिक अवस्था में अग्नि की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति नहीं होती । यह अवस्था कृष्णभावनामृत के शुभारम्भ जैसी है । दर्पण पर धूल का उदाहरण मन रूपी

दर्पण को अनेकानेक आध्यात्मिक विधियों से स्वच्छ करने की प्रक्रिया के समान है । इसकी सर्वश्रेष्ठ विधि है - भगवान् के पवित्र नाम का संकीर्तन । गर्भाशय द्वारा आवृत भ्रूण का दृष्टान्त असहाय अवस्था

से दिया गया है, क्योंकि गर्भ-स्थित शिशु इधर-उधर हिलने के लिए भी स्वतन्त्र नहीं रहता । जीवन की यह अवस्था वृक्षों के समान है । वृक्ष भी जीवात्माएँ हैं, किन्तु उनमें काम की प्रबलता

को देखते हुए उन्हें ऐसी योनि मिली है कि वे प्रायः चेतनाशून्य होते हैं। धूमिल दर्पण पशु-पक्षियों के समान है और धूम्र से आवृत अग्नि मनुष्य के समान है। मनुष्य के रूप में जीवात्मा में थोड़ा बहुत

कृष्णभावनामृत का उदय होता है और यदि वह और प्रगति करता है तो आध्यात्मिक जीवन की अग्नि मनुष्य जीवन में प्रज्ज्वलित हो सकती है। यदि अग्नि के धुएँ को ठीक से नियन्त्रित किया जाय तो अग्नि जल

सकती है, अतः यह मनुष्य जीवन जीवात्मा के लिए ऐसा सुअवसर है जिससे वह संसार के बन्धन से छूट सकता है। मनुष्य जीवन में काम रूपी शत्रु को योग्य निर्देशन में कृष्णभावनामृत के

अनुशीलन द्वारा जीता जा सकता है।

आवृतं ज्ञानमेतेन
ज्ञानिनो नित्यवैरिणा।
कामरूपेण कौन्तेय
दुष्पूरेणानलेन च
॥३९॥

आवृतम् – ढका हुआ; ज्ञानम् – शुद्ध चेतना; एतेन – इससे; ज्ञानिनः – ज्ञाता का; नित्य-वैरिणा – नित्य शत्रु द्वारा; काम-रूपेण – काम के रूप

में; कौन्तेय – हे कुन्तीपुत्र; दुष्पूरेण – कभी भी तुष्ट न होने वाली; अनलेन – अग्नि द्वारा; च – भी |

Text

इस प्रकार ज्ञानमय जीवात्मा की शुद्ध चेतना उसके काम रूपी नित्य शत्रु से ढकी रहती है जो कभी भी तुष्ट नहीं होता और अग्नि के समान जलता रहता है|

गीता भूषण टीका

यह श्लोक इस सिद्धांत को स्पष्ट करता है | ज्ञाता जीव के ज्ञान को उसका नित्य वैरी अर्थात काम ढका रहता है | अज्ञानी व्यक्ति के लिए, काम मित्र है क्योंकि यह काम , विषय का

भोग करते समय सुख देता है , हालांकि यह वास्तव में दुश्मन है, क्योंकि इसका अंतिम प्रभाव दुःख ही है। परन्तु जो व्यक्ति ज्ञानी है वह जानता है की विषयों को भोगते समय

भी यह काम केवल दुखों का ही कारण बनेगा और इस कारण से इसे नित्य वैरी कहा जा रहा है |

इस का अर्थ यह है इस हर प्रकार से इसका नाश करने का प्रयास किया जाना चाहिए | साथ ही

यह एक कभी भी तृप्त न होने वाली अग्नि के समान है | जिस प्रकार अग्नि को आहुति देकर कभी भी संतुष्ट नहीं किया जा सकता उसी प्रकार भोग के द्वारा इस काम को कभी भी संतुष्ट नहीं किया जा सकता |

अत: इस सम्बन्ध में स्मृति का कथन है |

न जातु कामः कामानाम् उपभोगेन शांयति हविषा कृष्ण-वर्त्मैव भूय एवाभिवर्धते

जिस प्रकार से मक्खन देने से अग्नि कभी शांत नहीं हो सकती है अपितु वह उसका और वर्धन करता है उसी प्रकार भोग करते हुए काम वासना को कम करने का प्रयास कभी भी सफल नहीं हो सकता है |

इस कारण से यह काम सभी जीवों का शाश्वत शत्रु है |

Purport

मनुस्मृति में कहा गया है कि कितना भी विषय-भोग क्यों न किया जाय काम की तृप्ति नहीं

होती, जिस प्रकार कि निरन्तर ईंधन डालने से अग्नि कभी नहीं बुझती | भौतिक जगत् में समस्त कार्यकलापों का केन्द्रबिन्दु मैथुन (कामसुख) है, अतः इस जगत् को मैथुन्य-आगार

या विषयी-जीवन की हथकड़ियाँ कहा गया है | एक सामान्य वन्दीगृह में अपराधियों को छड़ों के भीतर रखा जाता है इसी प्रकार जो अपराधी भगवान् के नियमों की अवज्ञा करते हैं, वे

मैथुन-जीवन द्वारा बंदी बनाये जाते हैं | इन्द्रियतृप्ति के आधार पर भौतिक सभ्यता की प्रगति का अर्थ है, इस जगत् में जीवात्मा की बन्धन अवधि का बढाना | अतः यह काम

अज्ञान का प्रतीक है जिसके द्वारा जीवात्मा को इस संसार में रखा जाता है | इन्द्रियतृप्ति का भोग करते समय हो सकता है कि कुछ प्रसन्नता की अनुभूति हो, किन्तु यह प्रसन्नता

की अनुभूति ही इन्द्रियभोक्ता का चरम शत्रु है |